एवं लोकरुचि भिन्नता का प्रमुख कारण है। इसीलिए अनेक रागों के स्वरूपों में भिन्नता न होने के बाद भी भिन्न-भिन्न गायकों-वादकों के द्वारा प्रस्तुत रूप नितनवीन आनन्द का अनुभव कराते हैं।

11. मेल अथवा थाट राग वर्गीकरण

दक्षिणी संगीत-पद्धति के विद्वान व्यंकटमखी[1] ने थाटों अथवा मेलों की संख्या 72 बताई है। पं. भातखण्डे के अनुसार यह तत्व सर्वसम्मत है कि संगीतरत्नाकर आदि ग्रन्थों में मूर्च्छना तथा जाति के संयोग से रागमेलों के निर्माण का उल्लेख किया गया है। मेल मूर्च्छना पर आधारित होते हैं और मूर्च्छना ग्राम पर। ग्राम स्वरों से बनते हैं और स्वर श्रुति से।[2] यही क्रम संगीत एवं उसके मेलादि तत्त्वों के विकास का है। कुछ विद्वानों के मतानुसार व्यंकटमखी द्वारा निर्धारित थाटों की संख्या उत्तरी पद्धति के लिए ठीक नहीं है, परन्तु यह मानने वाले भूल जाते हैं कि उत्तरी और दक्षिणी पद्धतियों में कोई मौलिक भेद नहीं है। दोनों की आधारशिला एक ही है।[3] दोनों पद्धतियों में रागों के वर्गीकरण का सिद्धान्त मूलतः एक होने के कारण उक्त संख्या को गलत नहीं कहा जा सकता। प्रायः सभी आधुनिक विद्वान इस संख्या को सही मानते हैं। पं. अहोबल ने सात स्वर युक्त थाटों को सम्पूर्ण, छः स्वरों से युक्त षाडव तथा पाँच स्वरों से युक्त थाट को औडव थाट कहा है।[4] इनके अनुसार सभी मेल, थाट अथवा रागों में षड्ज स्वर का होना अनिवार्य है। पं. अहोबल के अनुसार मेलों की संख्या 21340 है।[5]

थाट अथवा मेल शब्द का अर्थ एवं परिभाषा

स्वरों की जिस विशिष्ट रचना से राग-रागिनियों की उत्पत्ति की जा सके; उसे थाट या ठाठ या थाट कहते हैं। इसी को दक्षिण भारत में 'मेल' कहा जाता है। कुछ ग्रथों में इसके लिए 'संस्थान' शब्द का प्रयोग भी मिलता है।[6] मतंगकृत 'राग लक्षण प्रकरण' में संस्थान शब्द कई बार मिलता है। "Later the medieval northern authors Hrdayanarayana Deve and Lochana have used the term Sansthana has been mentioned for the Provincial term as Thata for Mela"[7] अभिनव राग मंजरी के अनुसार थाट या मेल स्वरों के उस समूह को कहते हैं, जिसमें राग उत्पन्न करने की शक्ति हो।[8] मेल और थाट इन दोनों शब्दों का प्रयोग

[1]. पं. विष्णु नारायण भातखण्डे, श्रीमल्लक्ष्यसंगीतम्, अनुवादक गुणवन्त माधवलाल व्यास, पृ.130, श्लो. 413।
[2]. पं. विष्णु नारायण भातखण्डे, श्रीमल्लक्ष्यसंगीतम्, अनुवादक गुणवन्त माधवलाल व्यास, पृ.114, श्लो.350-353।
[3]. महेशनारायण सक्सेना, संगीत, बिलावल थाट अंक, पृ.8।
[4]. पं. अहोबल, संगीत पारिजात, श्लो.331।
[5]. वही, श्लो.328।
[6]. पं. सीताराम चतुर्वेदी, भारतीय तथा पाश्चात्य रंगमंच, 649।
[7]. डॉ. इन्द्राणी चक्रवर्ती, संगीत मंजूषा, पृ.160।
[8]. पं. अहोबल, संगीत पारिजात, श्लो.329।

अनुमानतः 14वीं शताब्दी से प्रारम्भ हुआ है। 'मेल' का अर्थ है-मेलन, प्रकार या किसी विशिष्ट स्वरावली को प्राप्त करने की विधि तथा 'थाट' का अर्थ है-स्थिर रहना या ढांचा प्रस्तुत करना। पं. भातखण्डे के अनुसार सात शुद्ध स्वरों से युक्त मेल को सम्पूर्ण, छः स्वरों से युक्त मेल को षाड्व और पांच स्वरों से युक्त मेल अथवा थाट को औडव कहा गया।[1] इनका यह वर्णन पं. अहोबल के समान ही है।

थाट पद्धति का विकास

1160 ई. में लोचन कवि ने सर्वप्रथम रागों के वर्गीकरण की परम्परागत शैली ग्राम और मूर्च्छना के स्थान पर मेल अथवा थाट को आधार बनाया। उन्होंने समस्त रागों को बारह थाट अथवा मेलों से विकसित कहा है। वे बारह थाट इस प्रकार हैं:-1. भैरवी 2. तोड़ी 3. गौरी 4. कर्नाट 5. केदार 6. ईमन 7. सांरग 8. मेघ 9. धनाश्री 10. पूर्वी 11. मुखारी तथा 12. दीपक। थाटों का यह वर्गीकरण अत्यन्त महत्त्वपूर्ण है। लोचन के पश्चात् एक दीर्घकाल तक इस क्षेत्र में विशेष प्रगति नहीं हुई,[2] परन्तु सत्रहवीं शताब्दी में रागों का थाटों के अन्तर्गत वर्गीकरण प्रचलित हो गया था। संगीत-पारिजात और राग-विबोध नामक ग्रन्थों से यह पूर्णतः स्पष्ट हो जाता है।

व्यंकटमखी के मेलों की मेलन विधि

व्यंकटमखी ने अपने बहत्तर मेलों को इस प्रकार समझाया है-यदि बारह स्वरों के समस्त सप्तक को आरोह-अवरोह के अनुसार पूर्वांग और उत्तरांग में विभाजित करें; तो छः विभिन्न प्रकार के स्वरसमूह बन जाएँगे। यदि इनको आपस में मिला दिया जाए, तो छत्तीस स्वरसमूह बन सकते हैं। यदि शुद्ध मध्यम के स्थान पर तीव्र मध्यम का प्रयोग किया जाए तो इसी प्रकार अन्य छत्तीस स्वरसमूह और बन सकते हैं। इस प्रकार कुल 72 स्वर समूहों या थाटों का निर्माण होता है। अनाभ्यास के कारण उत्तर-भारत में इतने प्रकार के स्वर समूह संभव न हुए, किन्तु दक्षिणी संगीत में ये अब भी प्रचलित हैं। डॉ. इन्द्राणी चक्रवर्ती के अनुसार:-"व्यंकटमखी ने गणित के आधार पर 72 मेल स्थिर करने के बाद उन्नीस मेलों के अन्तर्गत ही समसामयिक रागों का वर्गीकरण किया है।"[3] रामामात्य ने केवल बीस मेल माने हैं।[4]

आधुनिक काल में राग वर्गीकरण की पद्धति

पं. भातखण्डे के अनुसार मेल और थाट शब्द समानार्थी हैं। उनके अनुसार प्रचलित संगीत के रागों को व्यंकटमखी के 72 मेलों में से केवल दस मेलों अथवा थाटों में अच्छी प्रकार वर्गीकृत किया जा सकता है।[5] दस से कम थाटों को उन्होंने अपर्याप्त माना है। उन्होंने दस थाट

[1]. पं. विष्णु नारायण भातखण्डे, श्रीमल्लक्ष्यसंगीतम्, अनुवादक गुणवन्त माधवलाल व्यास, पृ.116, श्लो.354।
[2]. महेशनारायण सक्सेना, संगीत, बिलावल थाट अंक, पृ.7।
[3]. डॉ. इन्द्राणी चक्रवर्ती, संगीत मंजूषा, पृ.188।
[4]. पं. रामामात्य, स्वरमेलकलानिधि, स्वर प्रकरण, अनुवादक विश्वम्भर नाथ भट्ट, पृ.24।
[5]. पं. विष्णु नारायण भातखण्डे, श्रीमल्लक्ष्यसंगीतम्, दूसरा अध्याय, अनुवादक गुणवन्त माधवलाल व्यास, पृ.194, श्लो.6।

मुख्य माने, जो आजकल सर्वमान्य हैं। इस प्रकार लोचन ने किसी समय थाटों के अन्तर्गत रागों को रखने की जिस प्रणाली को प्रस्तुत किया था, वह भातखण्डे के समय में पूर्ण वैज्ञानिक और व्यस्थित रूप में परिणत हुई।[1] इस प्रकार हम देखते हैं कि बारहवीं शताब्दी से लेकर बीसवीं शताब्दी तक थाट पद्धति को विकसित होने में लगभग 800 वर्ष लग गए। आज जो थाट-राग पद्धति हमारे सम्मुख है, वह अनेकों विद्वानों के सतत् परिश्रम का फल है।[2] इन दस थाटों को तीन वर्गों में विभाजित किया गया है। पहला वर्ग-रे, ध शुद्ध वाले थाटों का रखा गया। दूसरा वर्ग-रे, ग, नि शुद्ध वाले थाटों का रखा गया तथा तीसरा वर्ग-ग, नि कोमल वाले थाटों का रखा गया। श्री लक्ष्मीनारायण गर्ग ने थाट अथवा मेल पद्धति के आधार पर ही एक और नयी पद्धति का निर्माण किया है। उन्होंने इस वर्गीकरण को 'थाट-उपथाट रागांग पद्धति' या 'चतुर्विध राग वर्गीकरण' कहा है। इन्होंने माना है कि दस थाटों में नए-नए राग तथा सभी रागों का वर्णन नहीं हो सकता।[3] इसमें उन्होंने बत्तीस थाट तथा पिचानवे मिश्र थाटों का उल्लेख किया है।[4] इन सब पद्धतियों के होते हुए भी सर्वाधिक प्रचलित पद्धति भातखण्डे की दस थाट वर्गीकरण ही है।

थाटों के नियम

ठाटों में रागों का वर्गीकरण करने वाले गुणी एमन, बिलावल, खमाज, काफी, नट, भैरव और भैरवी ठाट में एक वैज्ञानिक क्रम मानते थे। सब स्वर चढ़े होने के कारण ये लोग कल्याण को प्रथम ठाट मानते थे। कल्याण के पंचम को स्थायी, अंश या आधार स्वर बनाने से बिलावल, बिलावल के पंचम को आधार स्वर बनाने से खमाज, खमाज के पंचम को आधार स्वर बनाने से काफी, काफी के पंचम को आधार स्वर बनाने से आसावरी और आसावरी के पंचम को आधार स्वर बनाने से भैरवी ठाट की प्राप्ति हुई है।[5] यही कार्य 'बलंदी' को 'पस्ती' में बदलना कहा जाता है। इस प्रक्रिया में जो स्वर कल्याण में चढ़े होते हैं, वे भैरवी में सभी उतर जाते हैं। पूर्वोक्त दृष्टि से यदि भैरवी, आसावरी, काफी, खमाज और बिलावल के आधार ठाट का पता चलाना हो तो उसके मध्यम को 'सा' मानकर देख लेने से यह प्रयोजन सिद्ध हो जाता है।

स्थूल रूप से थाट बारह स्वरों से तैयार होते हैं, किन्तु एक थाट में सात स्वर ही लिए जाते हैं, ये सात स्वर उन्हीं बारह स्वरों में से निर्धारित कर लिए जाते हैं। स्वर सा रे ग म प ध नि इसी क्रम से और इन्हीं नामों से होने चाहिए। यह हो सकता है कि उपर्युक्त सात स्वरों में से कोई कोमल या कोई तीव्र ले लिया जाए। राग में ये स्वर इस क्रम से हों या न हों, किन्तु थाट में इस क्रम का होना आवश्यक है। राग में सात स्वरों से कम भी हो सकते हैं, किन्तु थाट में सात स्वरों का होना आवश्यक है। थाट में आरोह-अवरोह, दोनों का होना जरूरी नहीं है,

[1]. डॉ. इन्द्राणी चक्रवर्ती, संगीत मंजूषा, पृ.188।
[2]. शोभा माथुर, भारतीय संगीत में मेल अथवा ठाट का ऐतिहासिक अध्ययन, पृ.183।
[3]. महेश नारायण सक्सेना, संगीत, बिलावल थाट अंक, पृ.3।
[4]. डॉ. शोभा माथुर, भारतीय संगीत में मेल अथवा थाट का ऐतिहासिक अध्ययन, पृ.171।
[5]. पं. विष्णु नारायण भातखण्डे, श्रीमल्लक्ष्यसंगीतम्, दूसरा अध्याय, अनुवादक गुणवन्त माधवलाल व्यास, पृ.194, श्लो.8, 9।

बल्कि इसमें केवल आरोह ही होता है। थाट में रंजकता का होना आवश्यकता नहीं है, यानि यह जरूरी नहीं कि थाट सुनने में कानों को अच्छा ही लगे। थाट में क्रमानुसार सात स्वर लेने जरूरी हैं और कभी-कभी एक स्वर के दो स्वरूप भी साथ-साथ आ सकते हैं, इसलिए प्रत्येक थाट में रंजकता का रहना संभव नहीं है।[1] महेश नारायण सक्सेना के अनुसार थाट को पहचानने के लिए, उसमें से उत्पन्न हुए किसी प्रमुख राग का नाम दे दिया जाता है। जैसे भैरव एक प्रसिद्ध राग है और वह भैरव थाट से ही उत्पन्न हुआ है, इसलिए इस थाट का नाम भी 'भैरव थाट' रख दिया गया। इसी प्रकार का विधान अन्य पर भी लागू होता है।

थाटों में रागों का वर्गीकरण

कल्याण, बिलावल, खमाज, भैरव, पूर्वी, मारवा, काफी, आसावरी, भैरवी तथा तोड़ी; इन दस थाटों के आधार पर पं. भातखण्डे ने उत्तर भारतीय संगीत के सभी रागों का वर्गीकरण किया है।[2] दस[3] थाटों में वर्गीकृत भारतीय संगीत के मुख्य रागों का वर्णन इस प्रकार है:-

थाट बिलावल

रामामात्य के अनुसार 'सारंग नाट' थाट हमारी हिन्दुस्तानी पद्धति का 'बिलावल' थाट होगा। रागविबोध में 'सालंक-नाट' नाम आया है। वहाँ 'सालंक-नाट' मल्लारी मेल में है।[4] बिलावल थाट में सभी स्वर शुद्ध हैं-सा रे ग म प ध नि सां।[5] इसके मुख्य रागों के नाम इस प्रकार हैं:-शुद्ध बिलावल, अल्हैया बिलावल, शुल्क बिलावल, देवगिरी बिलावल, यमनी बिलावल, ककुभ, नट बिलावल, लच्छासाख, सरपर्दा, देशकार, मलूहा, द्वितीय ककुभ, विहंग, हेमकल्याण, पहाड़ी, मांड, दुर्गा, शंकरा तथा नट आदि।

थाट कल्याण

इस थाट में मध्यम तीव्र तथा शेष स्वर शुद्ध हैं-सा रे ग मं प ध नि सां।[6] कल्याण थाट के मुख्य राग इस प्रकार हैं-यमन, ईमन कल्याण, भूपाली, शुद्ध कल्याण, चन्द्रकान्त, जयत कल्याण, मालश्री, हमीर, केदार, कामोद, श्याम कल्याण, छायानट, हिन्डोल तथा गौड़सारंग।

थाट खमाज

खमाज थाट में निषाद कोमल है, बाकी स्वर शुद्ध हैं-सा रे ग म प ध नि सां।[7] इसके प्रमुख राग इस प्रकार हैं-खमाज, झिंझोटी, द्वितीय दुर्गा, तिलंग, रागेश्वरी, खम्बावती, गारा, सोरठी, देश, जयजयवन्ती तथा तिलक कामोद आदि।

[1]. महेश नारायण सक्सेना, संगीत बिलावल थाट अंक, पृ.9।
[2]. पं. विष्णु नारायण भातखण्डे, श्रीमल्लक्ष्यसंगीतम्, अनुवादक-गुणवन्त माधवलाल व्यास, पृ.197, श्लो.16, 17, 18।
[3]. पं. सीताराम चतुर्वेदी, भारतीय तथा पाश्चात्य रंगमंच, पृ.649।
[4]. पं. रामामात्य, स्वरमेलकलानिधि, स्वर-प्रकरण, अनुवादक विश्वम्भर नाथ भट्ट, पृ.27।
[5]. पं. विष्णु नारायण भातखण्डे, श्रीमल्लक्ष्यसंगीतम्, अनुवादक-गुणवन्त माधवलाल व्यास, पृ.197, श्लो.20।
[6]. वही, पृ.198, श्लो.21।
[7]. वही, श्लो.22।

थाट भैरव

इस थाट में रे, ध स्वर कोमल और बाकी स्वर शुद्ध हैं-सा रे ग म प ध नि सां।[1] इसके प्रमुख राग इस प्रकार हैं:-राग भैरव, रामकली, बंगाल भैरव, सौराष्ट्र टंक, प्रभाती, शिव भैरव, आनन्द भैरव, अहीर भैरव, गुणकली, कालिंगड़ा, जोगिया, विभास तथा मेघरंजनी। संगीतरत्नाकर के वाद्याध्याय में इसे 'तुरुष्कगौड़' कहा गया है।[2]

थाट पूर्वी

रामामात्य के अनुसार जिसमें 'स रे प ध' ये स्वर शुद्ध हैं, च्युतपंचमध्यम, च्युतमध्यमगांधार तथा च्युतषड्जनिषाद-ये स्वर भी लगते हैं, उसे शुद्धरामक्रिया' मेल समझना चाहिए। यह मेल हिन्दुस्तानी पद्धति का 'पूर्वी' मेल होगा। दीपक इस थाट का राग है, यह याद रखना चाहिए।[3] व्यवहार में उत्तर भारतीय संगीत में इस थाट में रे ध, कोमल हैं, मं तीव्र शेष तथा स्वर शुद्ध हैं-सा रे ग मं प ध नि सां।[4] इसके प्रमुख रागों के नामों का उल्लेख इस प्रकार है:-पूर्वी, पूर्याधनाश्री, परज, श्री, गौरी, मालवी, त्रिवेणी, टंकी तथा बसन्ती आदि।

थाट मारवा

इस थाट में ऋषभ कोमल, मध्यम तीव्र शेष स्वर शुद्ध हैं। मारवा परमेल प्रवेशक है-सा रे ग मं प ध नि सां।[5] इसके प्रमुख रागों का वर्णन इस प्रकार है:-मारवा, पूरिया, जयन्त, मालीगौरा, साजगिरी, वराटी, ललित, सोहनी, पंचम, द्वितीय पंचम, भटियार, विभास तथा भंखार आदि।

थाट काफी

सभी राग मेलों में 'मुखारी' मेल प्रथम माना गया है। अर्थात् मुखारीमेल में सातों ही स्वर शुद्ध लगते हैं। इसी से मुखारी तथा कुछ अन्य ग्राम राग निकलते हैं। एक अन्य स्थान पर रामामात्य ने कहा है कि 'श्रीरागमेल' हिन्दुस्तानी संगीत के 'काफी मेल' के समान है।[6] वर्तमान में मुखारी मेल अथवा काफी थाट में ग व नि कोमल हैं, शेष स्वर शुद्ध हैं, यथा-सा रे ग म प ध नि सां।[7] इसके प्रमुख रागों का वर्णन इस प्रकार है-काफी, सैधवी, सिंदुरा, धनाश्री, भीमप्लासी, धानी, पटमंजरी, द्वितीय पटमंजरी, पटदीपिकी, हंसकंकणी, पीलू, द्वितीय पीलू, बागेश्वरी, शहाना, सूहा, सुघराई, नायकी कान्हड़ा, देवसाख, बहार, वृन्दावनी सारंग, मध्यमादि सारंग, सामन्त सारंग, शुद्ध सारंग, मियां की सारंग, बड़हंस सारंग, शुद्ध मल्लार, मेघ राग, मियां मल्लार, सूर

[1]. पं. विष्णु नारायण भातखण्डे, श्रीमल्लक्ष्यसंगीतम्, अनुवादक-गुणवन्त माधवलाल व्यास, श्लो.23।
[2]. पं. रामामात्य, स्वरमेलकलानिधि, स्वर प्रकरण, अनुवादक विश्वम्भर नाथ भट्ट, पृ.24।
[3]. रामामात्य, स्वरमेलकलानिधि, स्वर प्रकरण, अनुवादक विश्वम्भर नाथ भट्ट, पृ.24।
[4]. पं. विष्णु नारायण भातखण्डे, श्रीमल्लक्ष्यसंगीतम्, अनुवादक-गुणवन्त माधवलाल व्यास, पृ.198, श्लो.24।
[5]. वही, श्लो.25।
[6]. रामामात्य, स्वरमेलकलानिधि, स्वर प्रकरण, अनुवादक विश्वम्भर नाथ भट्ट, पृ.26।
[7]. पं. विष्णु नारायण भातखण्डे, श्रीमल्लक्ष्यसंगीतम्, अनुवादक-गुणवन्त माधवलाल व्यास, पृ.198, श्लो.26।

मल्लार, गौड़ मल्लार तथा द्वितीय गौड़ मल्लार आदि।

थाट आसावरी

इस थाट में ग ध नि कोमल हैं तथा शेष स्वर शुद्ध हैं-सा रे ग म प ध नि सां।[1] इसके प्रमुख रागों के नामों का वर्णन इस प्रकार है-आसावरी, जौनपुरी, तोड़ी, देवगांधार, द्वितीय देवगांधार, सिन्ध भैरवी, देशी, षटराग, कौशिक कान्हड़ा, दरबारी कान्हड़ा, अड़ाना तथा द्वितीय नायकी कान्हड़ा।

थाट भैरवी

इस थाट में रे ग ध नि कोमल शेष स्वर शुद्ध हैं, यथा-सा रे ग म प ध नि सां।[2] इस थाट के प्रमुख रागों का वर्णन इस प्रकार है-भैरवी, मालकौंश, शुद्ध आसावरी, धानी तथा विलासखानी तोड़ी आदि।

थाट तोड़ी

इस थाट में रे ग ध कोमल, मं तीव्र तथा शेष स्वर शुद्ध हैं, यथा-सा रे ग मं प ध नि सां।[3] इसके प्रमुख राग-तोड़ी, गुर्जरी तोड़ी तथा मुलतानी आदि हैं। इस प्रकार इन दस थाटों से ही समस्त रागों की रचना हुई है, एक-एक थाट से सैकड़ों राग निकल सकते हैं।

12. रागांग वर्गीकरण

विद्वानों के अनुसार रागांग वर्गीकरण पद्धति को प्रयोग में लाने का श्रेय पं. विष्णु नारायण भातखण्डे के शिष्य नारायण मोरेश्वर खरे को है। क्रियाकुशल गुणियों में कान्हड़ा तथा सारंग आदि अंगों की चर्चा गुरु-शिष्य परम्परा से ही चली आ रही है। इस पद्धति में सभी रागों में से मुख्य तीस रागों को प्रमुख माना जाता है। इन्हीं को रागांग कहते हैं। इन तीस रागों के अन्तर्गत अन्य सभी रागों को रखा जाता है। प्रत्येक रागांग की अपनी एक विशिष्ट पहचान होती है, जो उस अंग के सभी रागों में पाई जाती हैं अथवा कुछ प्रमुख रागों में ऐसे स्वरसमूह होते हैं, जिनसे उनकी स्वतंत्र छवि अथवा पहचान बनती है। ऐसे ही स्वतंत्र छवि बनाने वाले स्वरसमूह को 'रागांग' कहते हैं और स्वतंत्र अंग वाले राग प्रमुख राग माने जाते हैं।

रागांग वर्गीकरण का उद्भव एवं विकास

देशीरागों को रागांग, भाषांग, क्रियांग तथा उपांग इन चार वर्गों में विभाजित करने का उल्लेख आचार्य मतंग के काल से मिलता है। संगीतरत्नाकर के टीकाकार सिंहभूपाल और कल्लिनाथ दोनों ने कुछ पाठ भेद से इस सन्दर्भ में मतंग के मत का उल्लेख किया है। जिन

[1]. पं. विष्णु नारायण भातखण्डे, श्रीमल्लक्ष्यसंगीतम्, अनुवादक-गुणवन्त माधवलाल व्यास, श्लो.27।
[2]. वही, श्लो.28।
[3]. वही, श्लो.28।

रागों में ग्रामरागों की छायामात्र हो वे 'रागांग राग' कहे जाते हैं। जिन रागों में रागों की छाया स्वरसमूह में दिखाई देती है, जिसके श्रवण से रागमर्मज्ञों को यह पता चल जाता है कि इस स्वरसमूह में अमुक राग झाँक रहा है, यही छाया है। मध्यकाल में इस सिद्धान्त का और अधिक विस्तार हुआ। संगीत पारिजात आदि ग्रन्थों में एक राग के अनेक भेदों में इसी सिद्धान्त का प्रभाव दिखाई देता है। आगे चलकर पंडित भावभट्ट ने राग-भेद वर्गीकरण के रूप में इसका उल्लेख किया है, जिसमें बिलावल, कल्याण आदि 18 भेदों में 148 रागों के नाम उपलब्ध होते हैं।

रागांग वर्गीकरण का प्रभाव मेलसिद्धान्त के अंतर्गत रागों को वर्गीकृत किये जाने के पश्चात् भी दिखाई देता है। पं. भातखण्डे एक मेल के अंतर्गत अनेक रागांगों का समावेश करते हैं। मेल राग वर्गीकरण पद्धति में भी इस वर्गीकरण का प्रबल प्रभाव है। इस प्रबलता का प्रमुख कारण यही है कि राग की सामान्य पहचान तो स्वरों के द्वारा हो जाती है, परन्तु सूक्ष्म पहचान विशिष्ट स्वरसमूहों के माध्यम से ही होती है। किसी स्वर-समूह की यही मुख्य पहचान 'रागांग' कहलाती है।[1] उत्तर भारतीय संगीत में ऐसे अंग प्रमुख राग; जिनके स्वतंत्र अंग सर्वमान्य हैं तथा जिनकी छाया या अंग प्रभाव दूसरे रागों में दिखाई देते हैं अथवा भारतीय संगीत में प्रचलित प्रमुख रागांगों के आधार पर भारतीय संगीत के रागों का वर्गीकरण इस प्रकार है:-

बिलावल अंग

इस राग की प्रमुख स्वरावली अथवा राग का वह मुख्य अंग जिससे इस राग की पहचान होती है, इस प्रकार है:-पूर्वांग में-ग, रे ग प म ग, म रे सा, उत्तरांग में-ग प ध ध नि सां। उत्तरांग में धैवत स्वर का व्यवहार निषाद स्वर का स्पर्श करवाते हुए करना चाहिए तथा पूर्वांग में गान्धार वक्र रहता है। बिलावल थाट के सभी रागों में उपर्युक्त इसके पूर्वांग व उत्तरांग के स्वर समूह में से किसी राग में एक अथवा किसी राग में दोनों अंगों का प्रयोग किया जाता है। इस अंग के अन्य प्रमुख रागों में-अल्हैया बिलावल, यमनी बिलावल, देवगिरी बिलावल, शुक्ल बिलावल तथा नट बिलावल आदि हैं।

कल्याण अंग

इस राग के प्रमुख अंग प्रधान राग यमन और शुद्ध कल्याण हैं। इस अंग के अन्य प्रमुख रागों में श्याम कल्याण, पूरिया कल्याण, यमन कल्याण, हेम कल्याण, जैत कल्याण तथा शुद्ध कल्याण आदि हैं। इस अंग के कुछ रागों में यमन और कुछ रागों में शुद्ध कल्याण का अंग व्यवहृत होता है। यमन का पूर्वांग में प्रमुख अंग-नि रे ग रे सा और उत्तरांग में-मं ध नि ध प, इस प्रकार है। संगीत पारिजात में कल्याण नाम से वर्तमान शुद्ध कल्याण का रूप मिलता है। गपधप रे स और स ध़ प़---ग इस राग का प्रमुख अंग है।

काफी अंग

काफी भारतीय संगीत का प्रमुख थाट है। काफी इस थाट अथवा अंग का प्रमुख राग है। काफी थाट के अन्तर्गत-काफी, धनाश्री, कान्हड़ा, मल्लार और सारंग इन पांच अंगों को रखा

[1]. तुलसीराम देवांगन, भारतीय संगीत शास्त्र, पृ.291।

जाता है। काफी राग का प्रमुख अंग इस प्रकार है:-म प ध म प ग़ रे---स, रे ग़ म ग़ रे ग़ रेसा--, सा रे ग़ ग़ म प। काफी राग-सस, रेरे, गग, मम, पप स्वर समूह से सहज ही पहचाना जा सकता है। काफी अंग के अन्य प्रमुख रागों में-सैंधवी या सिंदूरा, बरवा, मिश्रकाफी और पीलू आदि हैं।

धनाश्री अंग

धनाश्री मूलतः काफी थाट का राग है और साथ ही काफी अंग के अन्तर्गत आने वाले पांच रागांगों में से एक अंग भी है। इसके आरोह में ऋषभ और धैवत स्वर वर्ज्य हैं। अतः इसकी जाति औडव-सम्पूर्ण मानी जाती है। इस राग में 'प ग़'[1] की संगति से राग स्पष्ट हो जाता है। भीमपलासी एवं धनाश्री समप्राकृतिक राग हैं, परन्तु भीमपलासी में मध्यम तथा धनाश्री में पंचम स्वर का अधिक प्रयोग किया जाता है। इसी भेद से इन रागों की पहचान अलग-अलग हो जाती है। इस राग का आरोह-सा ग़ म प नि़ सां और अवरोह-सां नि़ ध प म ग़ रे सा है। धनाश्री अंग के मुख्य रागों में-भीमपलासी, हंसकंकणी, पटदीपिकी, धानी तथा पटदीप आदि का नाम प्रमुख है। धनाश्री राग का प्रमुख अंग इस प्रकार है:-सा---नि़ सा ग़---रे सा, ग़म प--,म प नि़--ध प, धपमप ग़,--साग़मप ग़---प म ग़ रे सा।

सारंग अंग

सारंग अंग के प्रमुख रागों में-वृन्दावनी सारंग, मधुमाद सारंग, शुद्धसारंग, सामन्त सारंग, लंकदहन सारंग, मियां की सारंग तथा नूर सारंग आदि हैं। सारंग का प्रमुख राग वृन्दावनी सारंग को माना जाता है। वृन्दावनी सारंग का प्रमुख अंग पूर्वांग-उत्तरांग में इस प्रकार है:-सा--,नि़- सा रे--,रेम प म रे--, म रे नि़-सां। रे-म प--,मप नि़ प म रे।

कान्हड़ा अंग

इस अंग के प्रमुख राग-दरबारी, विनायक नारायण पटवर्धन ने इसको असावरी अंग का राग कहा है,[2] आड़ाना, कौसीं कान्हड़ा, नायकी, सुघराई, सूहा, शहाना, खमाजी तथा जयजयवन्ती आदि हैं। श्रीपाद बन्धोपाध्याय के अनुसार कान्हड़ा अंग में 'नि़ प'[3] संगीत ही इस अंग की पहचान मानी जाती है। कान्हड़ा अंग का प्रमुख स्वर समूह-नी़ पं--, ग़ ग़ म रे स है। यह स्वर समूह कान्हड़ा अंग के सभी रागों में पाया जाता है।

मल्लार अंग

इस अंग के प्रमुख राग शुद्ध मल्लार, मेघ मल्लार तथा मियां मल्लार हैं तथा इन तीनों की छाया से मल्लार के अनेक प्रकार बनते हैं। शुद्ध मल्लार पारिजात में मल्लार या मेल के नाम से वर्णित है। संभवतः प्राचीन मल्लार को सुरक्षित रखने की दृष्टि से मल्लार के साथ शुद्ध शब्द लगा दिया गया है। शुद्ध मल्लार का 'ग, नि' वर्जित औडव रूप बहुत कम प्रचलित है,

[1]. श्रीपाद बन्धोपाध्याय, संगीत भाष्य, पृ.185।
[2]. विनायक नारायण पटवर्धन, राग-विज्ञान, भाग-I, पृ.15।
[3]. वही, पृ.77।

परन्तु इसकी छाया को लेकर बने मल्लार के प्रकार बहुत प्रचलित हैं। इसका प्रमुख स्वर समूह अथवा अंग इस प्रकार है-रे म प, म नि म प, नि ध नि सां।

खमाज अंग

इस अंग का प्रमुख राग खमाज है। यह एक लोकप्रिय राग है। इसका मुख्य स्वर समूह इस प्रकार है-ध नि प ध नि--सां--सां नि ध प--ध म ग--। विनायक नारायण पटवर्धन के अनुसार खमाज राग का मुख्य अंग-ग म प ध नि ध प ध ग म ग है।[1] अन्य राग-झिंझोटी, तिलंग, खम्बावती, मांड, रागेश्री तथा दुर्गा आदि हैं।

भैरव अंग

इसका अंग प्रधान राग भैरव है। पूर्वांग में मुख्य अंग-ग म रे ग रे सा और उतरांग में ग म ध ध नि प-- है। अन्य प्रमुख रागों में अहीर भैरव, आनंद भैरव, शिवमत भैरव, प्रभाती भैरव, बैरागी भैरव तथा नट भैरव आदि हैं।

गौरी अंग

गौरी अप्रचलित और अनेक रूप वाली है। यह भैरव तथा पूर्वी मेल में गाई जाती है। गौरी का प्रमुख अंग-सा रे नि--सा--रे, ग--, रे गमग रे ग -रे सा-- है। इसमें गांधार और निषाद को बढ़ाकर सांयकालीन अन्य रागों से अलग किया जाता है। गौरी के मेल से ललिता गौरी, आसा गौरी मथा चैतीगौरी आदि प्रकार बनते हैं। पुराने ग्रन्थों में इसके स्वर भैरव मेल के हैं। सायंकाल में तीव्र मध्यम की प्रधानता रहती है। अतः शुद्ध मध्यम के स्थान पर तीव्र मध्यम के प्रयोग से पूर्वी मेल की गौरी का निर्माण होता है।

श्री अंग

इसका रागांग प्रमुख राग श्री है। श्री का प्रमुख अंग है-रे रे प, मं ध प, ऋरे, ग रे सा।[2] गौरी के भेदों में भी कहीं-कहीं श्री अंग दिखाई देता है। त्रिवेणी श्री अंग का प्रमुख सायंकालीन राग है। श्री टंक या टंकी त्रिवेणी से मिलता-जुलता राग है।

तोड़ी अंग

सा रे ग, रे ग रे सा तोड़ी का मुख्य अंग है। विनायक नारायण पटवर्धन के अनुसार इस राग का प्रमुख स्वर समूह अथवा अंग-ऋध, नि रे ग, ऋरे ग, रे सा।[3] यह राग केवल तीन स्वरों-सा रे ग से स्पष्ट हो जाता है। इस अंग के राग गुर्जरी तोड़ी, भूपाल तोड़ी, विलासखानी तथा बहादुरी तोड़ी आदि हैं।

1. विनायक नारायण पटवर्धन, राग-विज्ञान, भाग-II, पृ.187।
2. वही, पृ.27।
3. वही, पृ.73।

मारवा

रे ग मं ध, ध मं ग रे यह मारवा का प्रमुख अंग है।[1] पूरिया को भी कुछ लोग मारवा अंग का राग मानते हैं, परन्तु पूरिया में केवल मारवा के स्वर हैं, मारवा अंग नहीं। पूरिया एक स्वतन्त्र अंग माना जाता है। भटियार को कुछ लोग मारवा अंग का राग मानते हैं, परन्तु इस राग के अनेक गीतों में मारवा का अंग बहुत ही कम दिखाई देता है। वास्तव में भटियार अनेक रागाशों का मिश्रण है। ऐसे रागों को किसी अंग विशेष में समेटना कठिन है। मारवा अंग के राग बहुत कम पाए जाते हैं।

भैरवी अंग

इस अंग का प्रमुख राग भैरवी है। किसी भी स्वर से प्रारम्भ करके इच्छानुसार स्वर विस्तार करने से भी भैरवी दिखाई देती है। स्वभावतः यह सीधा, मधुर, सरल व बहुप्रचलित राग है। ऋषभ को बढ़ाने से भैरवी अधिक निखरती है। इसका प्रमुख अंग अथवा स्वरूप इस प्रकार है--सा रे सा--, सा रे गम, गमपम ग म रे सा निसा ग म म। ग म ध नि सां--नि सां रे सां--, प ध प म ग, ग म ग रे सा--।

आसावरी अंग

इस अंग का प्रमुख राग आसावारी है। कोमल ऋषभ या शुद्ध ऋषभ दोनों में-म प ध म प--ऋग --म रे सा।[2] यह स्वर समूह प्रधान रहता है। देशी, जौनपुरी, गांधारी तथा देव गान्धार आदि रागों का इसमें सहज ही समावेश हो जाता है। कुछ विद्वान कोमल ऋषभ आसावरी को तोड़ी भी कहते हैं।

पूर्वी अंग

पूर्वी राग पूर्वी थाट का आश्रय राग है। इस थाट में रे, ध कोमल तथा मं तीव्र और बाकी स्वर शुद्ध होते हैं। इस थाट का आश्रय राग होने के कारण पूर्वी में भी इन्हीं स्वरों का प्रयोग किया जाता है। पूर्वी अंग के प्रमुख राग हैं-पूरिया धनाश्री, जैतश्री, हंस नारायणी तथा देश आदि। पूर्वी राग का प्रमुख स्वर समूह-नि-, सा रे ग रे ग मं ग रे सा--।[3] विनायक नारायण पटवर्धन के अनुसार इस राग का प्रमुख अंग-ध प मं ग म ग रे म ग, ऋरे सा है।[4]

केदार अंग

यह कल्याण थाट का एक प्राचीन राग है। इस राग में दोनों मध्यम लगते हैं, परन्तु तीव्र मध्यम का प्रयोग आरोह में केवल पंचम के साथ किया जाता है। इस राग का वादी शुद्ध मध्यम एवं संवादी षड्ज है। इसका आरोह इस प्रकार है-सा म, मं प, धप, नि ध सां और

1. विनायक नारायण पटवर्धन, राग-विज्ञान, भाग-II, पृ.1।
2. वही, भाग-I, पृ.135।
3. श्रीपाद बन्द्योपाध्याय, संगीत भाष्य, पृ.219।
4. वही, पृ.85।

अवरोह इस प्रकार है-सा नि ध प, मं प ध प म रे--सा।[1] इस अंग के मुख्य राग इस प्रकार हैं-मलुहाकेदार, जलधरकेदार, बंसतकेदार तथा केदारबहार आदि।

ललित अंग

ललित मूल रूप से मारवा थाट का राग है। इस राग में पंचम स्वर को वर्ज्य करते हैं। अतः इसकी जाति षाडव-षाडव है। इस राग की मुख्य विशेषता यह है कि इस राग में दोनों मध्यमों का प्रयोग एक साथ ही किया जाता है। इसका मुख्य स्वर समूह इस प्रकार है-नि॒ रे॒ ग म मं म तथा ध मं म ग।[2]

हिंडोल अंग

हिंडोल मूलतः कल्याण मेल का राग है। इस राग में ऋषभ और पंचम स्वर वर्ज्य हैं। अतः इसकी जाति औडव-औडव है। इस राग का वादी स्वर धैवत और संवादी स्वर गान्धार है। इसका आरोह-सा ग मं ध नि सा तथा अवरोह-सा नि ध मं ग सा, इस प्रकार हैं। इस राग का मुख्य स्दर समूह-ग स मं ग सा है।[3]

मुलतानी

मुलतानी मूल रूप से तोड़ी अंग का राग है। इसके आरोह में पंचम और ऋषभ वर्ज्य हैं और अवरोह सम्पूर्ण है। इसका आरोह-सा ग॒ मं प नि सां तथा अवरोह-सा नि ध॒ प मं ग॒ रे॒ सा है।[4] मधुवन्ती तथा मधुकौंस आदि रागों में यह प्रधानता से दिखता है।

कामोद अंग

कामोद कल्याण थाट का राग है। इस राग में दोनों मध्यमों का प्रयोग होता है। वादी स्वर पंचम और संवादी स्वर ऋषभ है। इस राग को रात्रि के प्रथम प्रहर में गाया-बजाया जाता है। इस राग के आरोह में तीव्र मध्यम का प्रयोग किया जाता है। आरोह में गांधार का वक्र प्रयोग किया जाता है। इस राग अथवा अंग में 'रे प' की संगति वैचित्र्यपूर्ण एवं रंजकता से युक्त होती है।[5] इस अंग का मुख्य स्वर समूह-सा म रे प, मंपधप, गमप, गम रे सा है।

विहाग अंग

विहाग बिलावल थाट का राग है। गान्धार स्वर इस राग में ग्रह तथा अंश स्वर माना जाता है। इस राग में व्यवहार में दोनों मध्यमों का प्रयोग किया जाता है। इस राग में निषाद स्वर का लगाव वैचित्र्यपूर्ण एवं रागवाचक है।[6] आजकल यह राग एक स्वतन्त्र अंग के रूप में जाना जाता है। इस अंग के मुख्य राग-सावनी, बिहगड़ा, नटबिहाग तथा पटबिहाग आदि हैं।

1. विनायक नारायण पटवर्धन, राग-विज्ञान, भाग-II, पृ.41।
2. श्रीपाद बन्धोपाध्याय, संगीत भाष्य, पृ.317।
3. श्रीपाद बन्धोपाध्याय, संगीत भाष्य, पृ.407।
4. वही, पृ.280, 281।
5. पं. विष्णु नारायण भातखण्डे, श्रीमल्लक्ष्यसंगीतम्, अनुवादक-गुणवन्त माधवलाल व्यास, पृ.232, 233, 234।
6. वही, पृ.249, 250।

जयजयवन्ती

जयजयवन्ती खमाज थाट का राग है। इस राग का वादी स्वर ऋषभ तथा संवादी स्वर धैवत है। इसको रात्रि के द्वितीय प्रहर में गाया-बजाया जाता है। इसमें दोनों गांधारों एवं दोनों निषादों का प्रयोग किया जाता है। पं. भातखण्डे का मानना है कि यह राग सोरठ और देश अंगों से युक्त है। यह राग भी अपनी विशिष्टता के कारण आज स्वतन्त्र अंग के रूप में जाना जाता है। इस राग का मुख्य अंग अथवा स्वर समूह-रे ग॒ रे सा, ग॒ध़, नि॒ रे।[1]

देस अंग

यह खमाज थाट का राग है। इसमें दोनों निषाद तथा शेष स्वर शुद्ध लगते हैं। इस राग के आरोह में गांधार और धैवत वर्ज्य हैं। वादी ऋषभ और संवादी पंचम है। इस राग को रात्रि के दूसरे प्रहर में गाते हैं। इसका मुख्य अंग अथवा स्वर समूह-रे म प, नि॒ ध प, पधपम, ग रे, ग सा है। राग विज्ञान के अनुसार इसका अंग-नि॒ ध प ध मग रे, ग॒नि सा है।[2]

जोग अंग

जोग काफी थाट का राग है। इस राग में दोनों गान्धार प्रयुक्त होते हैं। निषाद कोमल तथा ऋषभ और धैवत स्वर वर्ज्य हैं। इस राग के आरोह में शुद्ध तथा अवरोह में कोमल गान्धार का प्रयोग किया जाता है। इस राग पर कई रागों की छाया सहज ही आने लगती है। अतः इस राग को सावधानीपूर्वक गाना अपेक्षित है। इस राग का मुख्य स्वर समूह अथवा अंग-गमप-नि॒ सां, नि॒पमग, म, पग--सा, नि॒, नि॒ स ग--, है। इस अंग के मुख्य राग-मालकौंस, जोगकौंस, कौंसी कान्हड़ा तथा मधुकौंस आदि हैं।

इसी प्रकार अन्य भी कुछ ऐसे राग हैं, जो अपने वैशिष्टय के कारण विशिष्ट अंग के रूप में जाने जाते हैं, जैस-सोरठ अंग व पहाड़ी आदि। किन्तु नारायण मोरेश्वर खरे ने केवल 26 रागांगों के आधार पर ही रागों का वर्गीकरण किया था। बाकी के ये कुछ अंग अपनी विशिष्टता के कारण ही प्रचार में आए हैं। अतः आधुनिक काल में उपर्युक्त लगभग 30 रागांग प्रचार में हैं। इसी के साथ अनेक राग ऐसे हैं, जिनका समावेश किसी विशिष्ट अंग में करना कठिन होता है। वास्तविकता तो यह है कि राग की रचना जब किसी अंगविशेष को लेकर की जाती है, तो ऐसे रागों को किसी अंग में रखा जा सकता, किन्तु जब राग रचना का आधार अंगप्रधान न होकर स्वर प्रधान होता है, तब ऐसे रागों को किसी अंग विशेष के दायरे में रखना कठिन होता है। रागों को प्रधानतः शुद्ध, अंग-प्रधान व स्वर प्रधान इन तीन वर्गों में विभाजित किया जा सकता है। शुद्ध, छायालग व संकीर्ण वर्गीकरण इसी दृष्टि से किया गया मालूम होता है। वर्तमान समय में इस वर्गीकरण को थाट राग वर्गीकरण के समकक्ष ही मान्यता प्राप्त हो चुकी है। अगर इन दोनों पद्धतियों का सम्मिश्रण करके एक नई पद्धति का निर्माण किया जाए तो राग वर्गीकरण की सैद्धान्तिक एवं वैज्ञानिक पद्धति का निर्माण हो सकता है।

1. विनायक नारायण पटवर्धन, राग-विज्ञान, भाग-II, पृ.95।
2. वही, भाग-I, पृ.204।